'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ९७ | वाराणसी, गुरुवार, २७ अगस्त, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

श्रीनगर (कश्मीर) ६-८-'५९

रूहानियत और ब्रह्मविद्या से ही समस्याओं का हल होगा

हर हालत में मारने के लिए जानेवाले सिपाही को भी मर मिटने के लिए तैयार होना ही पड़ता है। वह ऐसी प्रतिज्ञा नहीं कर सकता है कि मैं मारूँगा, लेकिन मरूँगा नहीं। इसलिए हमें एक ठंडी ताकत पैदा करनी होगी और उसके लिए हर घर की संमति हासिल करनी होगी। हर घर में सर्वोदयपात्र रखना होगा। चौथी बात यह थी कि कुल दुनिया को आज का ढाँचा बदलना पड़ेगा। उसके बिना दुनिया आगे नहीं बढ़ सकती है।

ब्रह्मविद्या के मानी

आज मैंने उन सबके मूल में जो ब्रह्मविद्या है, उसकी तरफ आपका ध्यान खींचा है। वह पुरानी ब्रह्मविद्या नहीं है। अभी मुझे एक भाई मिले, जो पाँच साल पहले मिले थे। वे आध्यात्मिक मैदान में काम करते हैं। मैंने उनसे पूछा कि आपने क्या काम काम किया तो उन्होंने कहा कि ध्यान करता था। मैंने कहा, इसमें क्या ब्रह्मविद्या हुई? जैसे काम करने की ताकत होती है, वैसे ध्यान की भी एक ताकत होती है। जैसे कोई काम करने की ताकत बढ़ाता है तो क्या यह कहा जायगा कि वह अध्यात्म में आगे बढ़ा है। वैसे ही किसी एक 'ऑब्जेक्ट' (विषय) पर एकाग्र होना, 'वन पॉइंटेड् माइंड' बनाना, इसे मैं एक ताकत समझता हूँ। इसमें रूहानियत कहाँ है? जो बड़े-बड़े वैज्ञानिक होते हैं, उनका दिमाग दूसरी बात सोचता ही नहीं, उसी एक 'पॉइंट' (बिंदु) पर सोचता है। मेरी ही मिसाल लीजिये। मुझे एकाग्रता के लिए कुछ भी नहीं करना पड़ता है, मुझे चारों ओर ध्यान हो तो उसीमें तकलीफ होती है। कुछ लोगों की ऐसी हालत होती है कि वे किसी कोठरी में गये तो अपनी आँख से पचास चीजें देख लेते हैं। लेकिन मैं किसी जगह पहुँचा तो मुझे पता ही नहीं चलता है कि वहाँ क्या-क्या है! मुझे ध्यान के लिए, एकाग्रता के लिए कुछ भी मेहनत नहीं करनी पड़ती है। लेकिन एकाग्रता हो गयी तो क्या 'स्पिरिच्युअल वैल्यूज़' बदल गयी, रूहानियत आ गयी? एकाग्रता तो एक मामूली ताकत है। लेकिन हम लोगों में एक गलतफहमी पैठी है। कोई किसी एकांत में, गोशे में, गुफा में गया तो हम समझते हैं कि आध्यात्मिकता आयी। लेकिन मुझे लगता है, लोगों में रहने से ये क्यों घबड़ाते हैं और ऐसी गुफा में बैठते हैं, जहाँ न हवा है, न रोशनी है, बदबू भी होती है। मैंने एक स्वामी की गुफा देखी, जहाँ उनकी समाधि लगती थी, वहाँ इतना अंधेरा था कि मैं तो हैरान हो गया! इस जमाने का समाधि लगानेवाला जो महापुरुष होगा, वह अंधेरे में नहीं जायगा।

बंगाल में विष्णुपुर में एक तालाब के किनारे बैठकर रामकृष्ण परमहंस की समाधि लगी थी, उसी स्थान पर बैठकर मैंने बड़ी नम्रता से कहा था कि रामकृष्ण ने जो काम शख्सी, निजी, व्यक्तिगत समाधि का किया था, वही काम सामाजिक समाधि का सामाजिक तौर पर मैं करना चाहता हूँ। जो समाधि व्यक्ति को हासिल हुई, वही सारे समाज को हासिल हो। रामकृष्ण ने गुफा में बैठकर, अंधेरे में समाधि लगाने की कोशिश नहीं की, बल्कि बिलकुल खुली हवा में, कुदरत में, आसमान के नीचे बैठकर कोशिश की। उन्हें किसी चीज का डर नहीं था। जो कुदरत से, खुली हवा से, इन्सान से डरता है और दूर किसी गुफा में जाकर कहता है कि अब मेरा ध्यान लगता है, वह इतना टूटा-फूटा मन लेकर क्या करेगा? जरा कहीं खट् आवाज हुई, चिड़िया फड़फड़ायी तो इनका ध्यान उधर जाता है। इस तरह गोशे में जाकर ध्यान-चिंतन करने की जो पुरानी बात थी, उसे मैं ब्रह्मविद्या नहीं मानता हूँ। ब्रह्मविद्या के मानी है, आपका और मेरा दिल एक हो और आप सबके लिए मेरे मन में उतना ही प्यार हो, जितना प्यार मुझे अपने लिए है। मुझमें और दूसरों में कोई तफरका, भेद नहीं है; इसका जिसे एहसास हुआ, उसे ब्रह्मविद्या का स्वाद चखने को मिला। इसी ब्रह्मविद्या की तरफ इन दिनों मेरा सारा ध्यान है। ◆◆◆

[गतांक से समाप्त]

सरकारी अफसरों के सामने

श्रीनगर (कश्मीर) ६-८-'५९

भारत के नये देवता सोचें कि देश के लिए उन्हें क्या करना है ?

ये देवता

आज श्रीनगर में हमारा पाँचवाँ और आखिरी दिन है। शाम की पब्लिक मीटिंगों के अलावा दूसरी मीटिंगों में भी मैं बोलता रहा हूँ। परसों इसी जगह एक बड़ी सभा हुई थी, जिसमें उस्ताद आये थे। कल उससे भी बड़ी सभा हुई। जिसमें विद्यार्थी आये, आज छोटी सभा हुई है। जिसमें आप लोग आये हैं, जिन्हें मैं देवता कहता हूँ।

कुछ लोग मामूली इन्सान होते हैं, कुछ गाइडेन्स देनेवाले होते हैं और कुछ देवता होते हैं। गाइडेन्स देनेवाले ऋषि होते हैं, जो अक्सर बहुत कम होते हैं, लेकिन उनके नाम से अक्सर दूसरे लोग गाइडेन्स देने लगते हैं और कभी-कभी मिसगाइड भी करते हैं।

जो लोग हुकूमत के जरिये खिदमत करते हैं, वे हैं देवता। वे अक्सर बहिश्त में रहते हैं। उनका मकान आला दरजे का होता है और वे लोगों से अलग रहना पसंद करते हैं। उनका रहन-सहन और उनका लिबास वगैरह मामूली लोगों से अलग रहता है। पुराने देवता हिन्दी या उर्दू में नहीं बोलते थे। कश्मीरी का तो सवाल ही क्या ? वे परशियन बोलते थे। उनसे पुराने देवता संस्कृत बोलते थे और आजकल के देवता अंग्रेजी बोलते हैं, जो उन्हें मामूली लोगों से अलग रखती है, अक्सर वे लोगों की जबान बोलना पसन्द नहीं करते और न जानते ही हैं। घर में माँ से तो जरूर उनको कश्मीरी में बोलना पड़ता है, लेकिन दो जुमले बोलने के बाद वे अंग्रेजी लफ्ज बोलने लगते हैं। जब वे अंग्रेजी में बोलते हैं, तब 'एट होम' फील करते हैं।

इन देवताओं की सत्ता

इन देवताओं में भी कुछ हैंड्स और कुछ हेड्स होते हैं, हैण्ड्स को दिमाग से कुछ काम नहीं करना होता है, वे हुक्म-बरदार होते हैं और हेड्स हाथ से कुछ करना नहीं जानते। वे मनसूबे बनाते हैं और 'मैन ऑन दि स्पॉट' उसका अमल करते हैं। 'मैन ऑन दि स्पॉट' जो कुछ करता है, वह मालिक की हिदायत से करता है। वह जो कुछ करेगा, ऊपरवाला उसका हमेशा बचाव ही करता रहेगा।

एक पुरानी कहावत है कि राजा या बादशाह कभी गलती नहीं कर सकता। आजकल बादशाहत बढ़ गयी है, जिले में जो डी० सी० होता है, उसके हाथ में उतनी ताकत होती है, जितनी पुराने जमाने के किसी बादशाह के हाथ में भी नहीं थी। फिर चाहे वह 'डेस्पॉट' या 'इम्परर' ही क्यों न कहलाता हो। यही डेमोक्रेसी है ?

बादशाहत की नकल का नमूना

प्राइमिनिस्टर लोगों का चुना हुआ होता है, लेकिन अपनी कैबिनेट वह खुद मुकर्रर करता है, उसपर लोगों का कोई खास असर नहीं होता। यह कहा जाता है कि प्राइमिनिस्टर टीम बनायेगा। कैबिनेट में वह अपने भरोसे के लोगों को रखेगा, जो उसकी हाँ में हाँ मिलायेंगे, अगर वे कुछ दूसरी बात कहेंगे भी तो दबी जबान से, आखिरी आवाज तो प्राइमिनिस्टर की ही होगी। इसी का नाम है टीम। यह मैं इसी देश की बात नहीं कर रहा हूँ। आज दुनियाभर की जम्हूरियत बादशाहत की नकल बन गयी है। बादशाह ही अपने सरदार तय करते थे और वे उनका सारा काम करते थे और अब अपने मिनिस्टर तय करते हैं। यह सारा 'एफिशेन्सी' के लिए होता है, बादशाहत में 'एफिशेन्सी' थी। वह अगर जम्हूरियत में न आये तो पनपेगी कैसे ? इसीलिए तय हुआ कि बादशाह की तरह प्राइमिनिस्टर कैबिनेट बनायेगा। क्योंकि उसमें मुख्तलिफ आवाज नहीं होनी चाहिए।

इस तरह बादशाहत की कॉपी करनी पड़ी और पड़ रही है। नाम जम्हूरियत का है, लेकिन कंटेंट बादशाहत जैसी है। बादशाहत में प्रजा का एक ही काम रहता था। वह यह कि अगर बादशाह अच्छा होगा तो उसकी तारीफ करना, अगर बुरा हुआ तो उसकी निन्दा करना। औरंगजेब खराब था तो सब उसे गाली देते थे। अकबर अच्छा था तो सब उसकी तारीफ करते थे। नसीब में हाकिम अच्छा आया तो उसकी तारीफ करना, नहीं तो बुराई। यही आम लोगों का काम रहता था।

आजकल जहाँ देखें, वहाँ एक ही नाम सुनायी देता है "ला हु समद" बख्शी साहब। वे भले मनुष्य हैं, इसलिए लोग उनकी तारीफ करते हैं, बुरे होते तो उनकी निन्दा करते। लेकिन इससे लोगों की अपनी कोई ताकत नहीं बनती। आज की जम्हूरियत में और पुरानी बादशाहत में कन्टेन्ट में कोई फर्क नहीं, फार्म में है।

भारत की यह गुलाम मनोवृत्ति

बिहार के गाँव-गाँव में मैं सवा दो साल तक घूमा हूँ। शायद ही बिहार के बाहर का कोई शख्स बिहार में इतना घूमा हो। वहाँके लोगों से मैंने पूछा कि जवाहरलाल नेहरू कौन हैं तो उन्होंने कहा : "हमारे देश का बादशाह"। यही वे दरअसल समझते भी हैं। देखिये न, वह ख़ुश्चेव आया, तब उसकी हद से ज्यादा बड़ाई की गयी। वे दो भाई आये थे, लेकिन अब उनमें से एक गायब है। उनका स्वागत करने के लिए करोड़ों लोग आते थे, जैसा गान्धीजी का स्वागत करने के लिए आया करते थे। बच्चों को स्वागत करने का तरीका सिखाया गया। मानो वे कहीं आसमान से उतरे हों। उनके दर्शनों से करोड़ों लोगों को क्या सबाब मिला, यह मैं नहीं जानता, इसका पता तो अल्लामियाँ के पास ही चलेगा। लेकिन इससे हिन्दुस्तान की गुलामी तो जाहिर हो ही गयी। पंडित नेहरू का रशिया में स्वागत हुआ। यहाँ बुलगानिन का। लेकिन दोनों स्वागतों में जमीन-आसमान का फर्क है। यहाँ करोड़ों लोग आते थे। इतना प्रचार किया। लोग उन्हें बादशाह समझकर दर्शन करने आये होंगे।

यह है हमारा ज्ञान

हमारे यहाँ जानकारी कितनी है। अभी एक भाई साहब ने हमें बताया कि इम्तहान में लड़कों ने लिखा कि महात्मा गान्धीजी का जन्म पाकिस्तान में हुआ था। खैर, वह तो बच्चे थे, लेकिन मेरा निजी तजुरबा ही देखिये। उदयपुर बड़ा शहर है। वहाँसे दस मील दूर मोटर रोड पर एक गाँव है। उस गाँव में सुबह मेरे आने के बाद जो लोग इकट्ठा हो गये थे, उनकी सभा हुई। तीस जनवरी का दिन था। वह, जो कि गाँधीजी की पुण्यतिथि है। एक बड़ी उम्र की बहन से मैंने पूछा : "गांधीजी का नाम सुना है ?" उसने कहा : 'जी हाँ।' मैंने फिर

पूछा : "वे कहाँ हैं ?" उसने बताया : "वे शहर में होंगे।" मैंने पूछा : "उदयपुर में या किसी दूर के शहर में ?" उसने कहा : "वहीं होंगे।" फिर मैंने जवानों में से एक को, जो करीब २० साल का होगा, पूछा : "तुमने गांधीजी का नाम सुना है ?" उसने कहा : "जी नहीं।" आगे सवाल पूछना बाकी ही नहीं रहा। हमारे सेन्टर के एज्यूकेशन मिनिस्टर श्रीमालीजी साथ में थे। उदयपुर उनकी कान्स्टिच्युएन्सी है। अक्सर यह रिवाज है कि जिनकी कान्स्टिच्युएन्सी में से बाबा गुजरता है, वहींके नुमाइन्दे यात्रा में हाजिर हो जाते हैं। मैंने श्रीमालीजी से कहा कि आपकी कान्स्टिच्युएन्सी में आपने इतनी जहालत कायम रखी है ?

मैसूर के नजदीक लगभग बीस मील की दूरी पर एक देहात था। वहाँके लोगों को मैं यह समझा रहा था कि जिस तरह बंगाल के अकाल में लाखों लोग मर गये, उसी तरह आज भी मर सकते हैं। लेकिन यह समझाते हुए मुझे शक हुआ कि क्या ये लोग बंगाल का नाम जानते होंगे ? उस सभा में मैंने कहा कि जिन्होंने बंगाल का नाम सुना हो, वे हाथ ऊँचा करें। उस गाँव के कुल के कुल लोग बंगाल का नाम तक नहीं जानते थे। मैं यह समझ सकता था कि बंगाल के अकाल के बारे में वे लोग नहीं जानते। क्योंकि उस घटना को १४ साल बीत चुके थे। लेकिन एक पूरे सूबे का नाम भी न जानना और सो भी मैसूर जैसे वेल-एज्यूकेटेड कहे जानेवाले राज्य में। यह तो एक अजीब बात थी।

खैर, मैं यह कह रहा था कि हमारी जम्हूरियत बादशाहत की नकल ही है, उसमें आप लोगों की कोई तरक्की नहीं हो सकती।

राजनीति से संन्यास लेने की परंपरा कायम हो

एक बात मैंने इन लोगों को बार-बार समझायी है कि कम-से-कम एक नियम कर दीजिये कि कोई भी राजनीतिज्ञ अमुक अवधि के बाद अपनी जगह पर नहीं रहेगा। वह वहाँसे रिटायर्ड हो जायगा। हमने यह माना है कि सबसे बड़े जज, जिनका कि माइन्ड बैलेन्स्ड होता है, वे भी ६५ साल के बाद रिटायर्ड हो जाते हैं। लेकिन मिनिस्टरों के लिए ऐसी कोई मियाद नहीं है ? क्या उनका दिमाग बड़े से बड़े जज से भी ज्यादा पुख्ता है ? क्या बुढ़ापे का असर उनपर कुछ नहीं होता ? हमारे शुक्लाजी (भूतपूर्व मुख्यमंत्री मध्य प्रदेश) ७०-८० साल तक रहे। आखिर में मरे, इसीलिए छूटे। इस तरह क्यों चिपके रहते हैं ? क्या हमारे विधान में ऐसा कोई प्रबंध नहीं है कि अमुक साल के बाद लोग अपने स्थान पर नहीं रहेंगे। इसका मुझे कोई जवाब नहीं दिया गया। बादशाह और सबको हटा सकता था, अपने आपको नहीं। वैसा ही अब भी है। इसीलिए यह सारा नाटक चलता है।

राष्ट्रपति की यह शान

मैं किसीकी बेइज्जती नहीं करना चाहता। लेकिन एक मिसाल देता हूँ। मेरे दोस्त, मेरे पूज्य, गान्धीजी के साथी, बुजुर्ग राष्ट्रपति सादगी की मूर्ति हैं, लेकिन जब उनकी सवारी निकलती है, तब क्या शान होती है। चाहे जान भले ही जाय, पर मान से सवारी निकाली जाती है। ऐसे हमारे शान-शौकत के खयाल हैं। नतीजा यह हुआ कि राज्य-कारोबार खर्चीला हो गया है और हम लोगों को एकॉनामी सिखाते हैं। एक ओर ऑस्टिरिटी की बातें और दूसरी ओर यह सारा खर्च। क्या उनसे सादगी से नहीं रहा जाता ? परसनली वे आज भी रहते ही हैं। लेकिन विक्टोरिया रानो का वह रोब उठाने के लिए तो कई आदमी चाहिए। यह भावना हमारे दिमाग से अभी तक गयी नहीं है।

खिदमत के लिए रहने का तरीका बदलें

सरकारी अधिकारी, जो वास्तव में खादिम हैं, लोगों में घुल-मिल नहीं सकते। यह देखा जाता है कि उनमें से जो भी लोगों में मिलते हैं, वे कितने प्यारे बन जाते हैं। इसका जरा आप लोग भी अनुभव करके देखिये। मिसाल के तौर पर बख्शीजी लोगों में मिलते हैं तो उन्होंने काफी प्यार पाया है। उन्होंने इज्जत खोयी नहीं है। लेकिन अक्सर अफसरों में अकड़ होती है। देश के लोगों की जिन्दगी के साथ उनका कोई ताल्लुक नहीं होता है। इसीलिए तो उनको "देवता" नाम मिला है।

आज मुझे "डल लेक" में ले गये थे। मैंने देखा कि वहाँ कुछ अच्छे 'हाउस बोट्स्' बने थे। साथ ही साथ कुछ गरीबों की झोपड़ियाँ भी थीं। अगर हममें जरा भी 'सेन्स आफ ब्यूटी' होती तो हम ऐसा नहीं होने देते। इसमें कोई ब्यूटी नहीं है, यह भद्दापन है। वे लोग नंगे रहें और हम अपनी अकड़ में रहें एवं उसे अपना दर्जा समझें, यह बिलकुल गलत खयाल है। तवारीख में आप देखेंगे कि उन्हीं बादशाहों का लोगों पर सबसे ज्यादा असर रहा है, जो सबसे अधिक सादगी से रहे हैं। नेपोलियन, शिवाजी वगैरह इसके उदाहरण हैं। सादगी के कारण लोगों का उनपर प्यार बढ़ा और वे उनके लिए मर मिटने को तैयार हुए। अक्सर कोई अफसर अच्छे होते हैं। वे चाहते हैं कि उनके हाथ से मुल्क की खिदमत हो। पहले मेरा यह खयाल नहीं था। लेकिन इस आठ साल की पदयात्रा में मैंने देखा है कि इनमें बहुत से ऐसे होते हैं, जो खिदमत करना चाहते हैं। लेकिन उनका रहने का ढँग ही उन्हें जकड़े रहता है।

आप किसके नुमाइन्दे हैं ?

मैं आपको कोई नसीहत देने के लिए यहाँ नहीं बैठा हूँ। मैं आपसे इतना ही कहना चाहता हूँ कि आपका ताल्लुक जिनके साथ है, उनकी हालत बिलकुल गिरी हुई है। कश्मीर में हमने जो कुछ 'ब्यूटी स्पॉट्स' देखे, वे सब के सब 'डर्टी स्पॉट्स' थे। वहाँ हमने हद दर्जे की गुरबत देखी। लोरेन, गुलमर्ग, जहाँ गये, वहाँ एक ही हाल था। मैं एक जगह अपने साथियों से आगे अकेला पहुँच गया। गाँववालों से मैंने कहा कि मैं आपके यहाँ खाना खाऊँगा। सारे गाँव में सिर्फ एक ही घर में खाना था। उस एक घर में मुझे मकई की रोटी और तरकारी मिली। मैं यह जानता हूँ कि यहाँके लोग इतने मेहमान-नवाज हैं कि अगर किसी भी घर में जरा भी खाना होता तो वे खुद छोड़कर मुझे जरूर देते। हमारे साथ जो मजदूर थे, वे पैसा लेने से इन्कार करते थे। वे कहते थे कि हमें खाना दो। ऐसी हालत लोरेन में थी। आप ऐसे गरीब देश के नुमाइन्दे हैं, यह कभी मत भूलिये, नहीं तो संस्कृत में एक कहावत है "राज्यान्ते नरकः"।

श्रीनगर के रास्ते खूब चौड़े बना दिये, यह तो ठीक है, लेकिन इतना ही काफी नहीं है। यह आप न भूलें कि आप किसके नुमाइन्दे हैं। इन्सानियत बड़ी चीज है। जहाँ वह होती है, वहाँ 'पुलिस-स्टेट' भी अच्छी बन जाती है और जहाँ वह नहीं होती, वहाँ 'वेलफेयर स्टेट' भी 'इल फेयर स्टेट' बन जाती है। आजकल तो वेलफेयर के नाम से सारी ताकत चंद लोगों के हाथ में आ गयी है।

"रघुवंश" के एक श्लोक में 'वेलफेयर स्टेट' का वर्णन किया है :

"स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः"

यानी वह राजा प्रजा का रक्षण करता है, प्रजा को शिक्षण देता है और सभी कुछ करता है। असल में प्रजा का पिता वही है। लोगों के माँ-बाप तो सिर्फ जन्म देनेवाली मशीनें हैं। ऐसी 'वेलफेयर स्टेट' अगर रही तो जिन्दगी में क्या रह जायगा? मजा नहीं रहेगा। जिन्दगी के सारे काम के लिए प्रजा सरकार पर निर्भर रहे, यह कतई ठीक नहीं है।

सब इन्सान समान हैं

लोग सोचने की जिम्मेदारी खुद उठायें। अपने पाँव पर खड़े हों। यह आवश्यक है। आपमें से जो मुसलमान हैं, वे जानते हैं कि जामा मस्जिद में नमाज पढ़ने के लिए जाते हैं, तब नमाज पढ़नेवाले सभी लोग समान माने जाते हैं। बादशाह भी वहाँ एक खानसामे के साथ बैठता है, मामूली लोगों के साथ बैठता है। यही इस्लाम की डेमोक्रेसी का खयाल है। उपनिषदों में भी यही आता है। बाइबिल में भी ऐसा ही प्रसंग है। "लव दाय नेवर, एज योरसेल्फ" अर्थात् अपने जिस्म पर जितना प्यार हो, उतना ही प्यार पड़ोसी पर भी करो।

आज मुझे आपसे यही एक बात अर्ज करनी थी कि आप खायें, पीयें और मौज करें, तब इस चीज का बराबर खयाल रखें कि आप किसके नुमाइन्दे हैं। ◆◆◆

खादी कार्यकर्ताओं के बीच

अनंतनाग (कश्मीर) ७-८-'५९

खादी को चिरस्थायी कैसे बनाया जाय ?

बापू की प्रेरणा से बुनाई सीखनेवाले सबसे पहले लोगों में से मैं एक हूँ। तब हम रोज पचीस गज नेवार बुनते थे। उस समय खादी उपासना और भक्ति का साधन थी। बाद में एक साल मैं रोज सोलह लटी कातता था और उससे जो मजदूरी मिलती थी, उसीपर गुजारा करता था। कताई के समय कुछ घंटे तो मैं लोगों को कुछ पढ़ाता था। लेकिन बाकी समय मौन रखता था। उपासना-बुद्धि से कातता था। नया धागा निकालते समय 'तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।' और सूत भरते समय 'ॐ, भूः, भुवः, स्वः' मन में बोलता था।

खादी : दकियानूस नहीं

उसके बाद खादी आजादी का लिबास बनी। इस तरह खादी का अर्थ जाहिर होता गया। स्वराज्य के बाद कुछ लोगों ने खादी का उपयोग एक लायसेन्स के तौर पर किया। तब हम खादी=टग, यहाँ तक पहुँच गये। यह सब पाँच-छह साल तक चला। मैं घूमता था और देखता था कि खादी की इज्जत गिर रही है। कताई करनेवाले लोग मायूस थे। बहुत सारे ऐसा समझते थे कि खादी नहीं टिकेगी।

जब भूदान आया, तब धीरे-धीरे खादी की ओर तो नहीं, लेकिन खादी का काम करनेवाले हमारे जैसे लोगों के काम से कुछ गलाई जरूर होगी—ऐसा यकीन लोगों में आया। खादी पर एक चार्ज था कि वह दकियानूसी विचार है। अम्बर-चरखे की खोज से यह साबित हुआ कि इसमें दकियानूसी नहीं है। भूदान और अम्बर की खोज, इन दोनों से खादी की इज्जत बढ़ी।

खादीवाले शान्ति-सैनिक बन ही सकते हैं

अभी हमने शांति-सेना का काम शुरू किया। उसमें हम गैरजानिबदार 'पार्टीलेस' लोगोंको दाखिल करते हैं। अगर ऐसा न करें तो लोगों का हमपर भरोसा नहीं होगा। इसलिए शांति-सेना का खास काम सर्वोदयवाले ही कर सकते हैं, ऐसा खयाल आया। यहाँ तक हम पहुँचे हैं। अगर यह काम हम नहीं कर सकते तो और कोई नहीं कर सकता, इतना तो जाहिर है। अगर हम इसको थोड़ा भी करें तो इससे हमारी इज्जत बढ़ेगी। बिहार में खादीवालों की इज्जत बढ़ी, क्योंकि उन्होंने इस समय सीतामढ़ी के दंगे में शांति-सेना का काम किया। काँग्रेसवाले जहाँ पहले निकलते नहीं थे, वहाँ ये लोग गये और बाद में काँग्रेसवाले भी आये।

खादी का रक्षण

आज तक खादी ने हमको पाला-पोसा। लेकिन क्या खादी का पालन हम कर रहे हैं? उसके लिए यह बड़ा जरूरी है कि हम सब पार्टियों से अलग हो जायँ। जमीन के मसले के साथ खादी को जोड़ें। अगर हम मजदूरों को मजदूरी कम देते हैं तो ज्यादा दें। अगर ऐसा न हुआ तो अम्बर-चरखे के जरिये भी शोषण हो सकता है। शांति-सेना के लिए हम तैयार हों और लोक-सेवक बनें। इतना अगर हम करेंगे तो खादी 'विल कम टु स्टे' (चिरस्थायी होगी)। खादी के लिए स्वतन्त्र मदद मिलना खादी के हक में नहीं है।

मैं शुरू से खादी का कार्यकर्ता रहा हूँ और नयी तालीम का भी। कताई, बुनाई, धुनाई वगैरह कामों में अपनी जिन्दगी की जवानी के साल बिताये। उसीके अनुभव पर से यह कह रहा हूँ। अब हमें अम्बर-चरखा वगैरह साधनों के जरिये देशभर में ग्रामोद्योगों के लिए वातावरण तैयार करना चाहिए। ◆◆◆

अनुक्रम

१. रूहानियत और ब्रह्मविद्या से ही समस्याओं का हल होगा
श्रीनगर ३ अगस्त '५९ पृष्ठ ६०३
२ भारत के नये देवता सोचें कि देश के...
श्रीनगर ६ अगस्त '५९ ,, ६१४
३. खादी को चिरस्थायी कैसे बनाया जाय ?
अनंतनाग ७ अगस्त '५९ ,, ६१६

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी